राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 1015/2023

दीपक सोनी पुत्र स्व. रमेश चन्द्र सोनी, उम्र लगभग 37 वर्ष, निवासी 218/1 गांधी सागर पार्क के पास, लक्ष्मी नगर, भीलवाड़ा, तहसील एवं जिला भीलवाड़ा (राजस्थान)

----याचिकाकर्ता

बनाम

अनामिका पत्नी श्री. दीपक सोनी, पुत्री भगवती लाल जी सोनी, निवासी 218/1 गांधी सागर पार्क के पास, लक्ष्मी नगर, भीलवाड़ा, तहसील व जिला भीलवाड़ा वर्तमान में गणेश कॉलोनी, गिरवर पोल के बाहर, भींडर, जिला उदयपुर में रहता है।

----प्रत्यर्थी

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से : डॉ. सचिन आचार्य, वरिष्ठ अधिवक्ता ने श्री जीतेन्द्र चौधरी की सहायता की

प्रत्यर्थी (गण) की ओर से :

माननीय न्यायमूर्ति पुष्पेंद्र सिंह भाटी

आदेश

रिपोर्टेबल

आदेश सुरक्षित करने की तिथि : 18/05/2023

आदेश उच्चारित करने की तिथि : 26/05/2023

1. यह रिट याचिका निम्नलिखित का दावा करते हुए दायर की गई है राहतें:

> *"इसलिए, याचिकाकर्ता की ओर से अत्यंत सम्मानपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि कृपया रिट याचिका को उचित रिट, आदेश या निर्देश द्वारा अनुमति दी जाए:-*
>
> *I. विद्वान पारिवारिक न्यायालय संख्या 1, उदयपुर द्वारा प्रकरण संख्या*

757/2019 में पारित आदेश दिनांक 15.11.2022 (अनुलग्नक-6) को कृपया रद्द किया जाए और सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन (अनुलग्नक-2) को पूरी तरह से अनुमति दी जाए;

II. कोई अन्य उचित आदेश या निर्देश, जिसे यह माननीय न्यायालय इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित और न्यायसंगत मानता है, अपीलार्थी के पक्ष में पारित किया जाए।

III. "कृपया रिट याचिका की लागत अपीलार्थी को प्रदान की जाए।

2. अपीलार्थी-पति की ओर से उपस्थित श्री जितेंद्र चौधरी की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. सचिन आचार्य द्वारा इस न्यायालय के समक्ष रखे गए मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि अपीलार्थी-पति ने एक आवेदन दायर किया (मामला संख्या 83/2019 के रूप में पंजीकृत) हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (इसके बाद 'अधिनियम 1955' के रूप में संदर्भित) की धारा 13 के तहत, प्रत्यर्थी-पत्नी के खिलाफ विद्वान परिवार न्यायालय, भीलवाड़ा के समक्ष तलाक की डिक्री की मांग की गई है; इसे आगे विद्वान पारिवारिक न्यायालय संख्या 1, उदयपुर में स्थानांतरित कर दिया गया और उक्त न्यायालय में केस संख्या 757/2019 के रूप में दर्ज किया गया।

2.1 जैसा कि 1955 के अधिनियम की धारा 13 के तहत आवेदन में उठाया गया आधार क्रूरता था, न कि व्यभिचार।

2.2 तलाक के आवेदन के लंबित रहने के दौरान, अपीलार्थी-पति ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में, 'सीपीसी') की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें पैरा नंबर 12ए और पैरा 12बी को अधिनियम 1955 की धारा 13 के तहत आवेदन की पैरवी के ए-1 आधार रूप में जोड़ने की मांग की जाए डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड (डीएनए) पितृत्व बच्चे/बेटा की परीक्षण रिपोर्ट दिनांक 11.09.2019 (उक्त आवेदन के साथ संलग्न) पर आधारित है, जिसे विद्वान परिवार न्यायालय के समक्ष मामले में बाद की घटना बताई गई है।

2.3 प्रत्यर्थी-पत्नी ने सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत

उक्त आवेदन का विस्तृत उत्तर दाखिल किया, जिसमें दिए गए कथनों से इनकार किया गया। विद्वान परिवार न्यायालय ने दिनांक 15.11.2022 के आक्षेपित आदेश के तहत अपीलार्थी-पति द्वारा सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत आवेदन को खारिज कर दिया। इसलिए, उपरोक्त उद्धृत राहतों का दावा करते हुए अपीलार्थी-पति द्वारा वर्तमान याचिका दायर की गई है।

3. अपीलार्थी-पति के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि डीएनए पितृत्व परीक्षण रिपोर्ट दिनांक 11.09.2019 से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अपीलार्थी-पति बच्चे (बेटे) का पिता नहीं है, और, अपेक्षित परीक्षण डीडीसी में एक आईएसओ/आईईसी 17025:2005, आईसीएलए और कैप मान्यता प्राप्त प्रयोगशाला कराया गया है।

3.1 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि वैवाहिक मामलों पर विचार करने वाले पारिवारिक न्यायालय के पास किसी विशेष मामले में शामिल मुद्दे के कारण चिकित्सा परीक्षण कराने के लिए आदेश देने की शक्ति है, और यह निश्चित रूप से व्यक्तिगत अधिकार का उल्लंघन नहीं होगा। जैसा कि किसी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता, भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत निहित है।

3.1.1. इसलिए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, किसी व्यक्ति को वैवाहिक मामले में पितृत्व को साबित करने या अस्वीकार करने के उद्देश्य से डीएनए पितृत्व परीक्षण से गुजरने के लिए कानूनी रूप से मजबूर किया जा सकता है। इस तरह की दलील के समर्थन में, ***शारदा बनाम धर्मपाल (2003) 4 एससीसी 493*** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है और ***बोम्मी और अन्य बनाम मुनिराथिनम (2003 का सी.आर.पी. संख्या 2710,*** 28.07.2004 को निर्णय लिया गया) के मामले में माननीय मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है।

3.2 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी कहा कि किसी बच्चे के पितृत्व का निर्धारण करने के उद्देश्य से डीएनए पितृत्व परीक्षण सबसे महत्वपूर्ण तरीका है, और इस प्रकार, इसे अधिकार के मामले के रूप में दावा किया जा सकता है, और किसी भी व्यक्ति द्वारा इससे इनकार नहीं किया जा सकता है; जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, डीएनए पितृत्व परीक्षण, जैसा कि कराया गया है, स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलार्थी-पति बच्चे (बेटे) का पिता नहीं है।

3.2.1 इस तरह की दलील के समर्थन में, ***दीपान्विता रॉय बनाम रोनोब्रोटो रॉय (2015) 1 एससीसी 365*** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है। जिसका प्रासंगिक भाग, जिसा पर विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने भरोसा किया है, इस प्रकार पुनः प्रस्तुत किया गया है-:

> *"11.....डीएनए परीक्षण सबसे वैध और वैज्ञानिक रूप से सही साधन है, जिसका उपयोग पति अपनी बेवफाई के दावे को स्थापित करने के लिए कर सकता है। इसे साथ ही पत्नी के लिए भी सबसे प्रामाणिक, उचित और सही साधन के रूप में लिया जाना चाहिए, ताकि वह प्रत्यर्थी-पति द्वारा किए गए दावों का खंडन कर सके, और यह स्थापित कर सके कि वह बेवफा, व्यभिचारी या बेवफा नहीं थी। यदि अपीलकर्ता-पत्नी सही है, तो उसे ऐसा साबित किया जाएगा।"*

3.2.2 ***नंदलाल वासुदेव बडवाइक बनाम लता नंदलाल बडवाइक एवं अन्य (2014) 2 एससीसी 576*** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया गया है। जिसका प्रासंगिक भाग, जैसा कि विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने भरोसा किया है, इस प्रकार है:

> *"19. पति की यह दलील कि बच्चे के जन्म के समय उसकी पत्नी तक कोई पहुंच नहीं थी, अतः डीएनए परीक्षण रिपोर्ट से साबित होती है और इसके सामने, हम अपीलार्थी को बच्चे के पिता बनने के लिए मजबूर नहीं कर सकते, जब वैज्ञानिक रिपोर्ट इसके विपरीत साबित करती है। हम इस बात के प्रति सचेत हैं कि एक मासूम बच्चे को अपमानित नहीं किया जा सकता क्योंकि उसके जन्म के समय उसके माता और पिता के बीच विवाह चल रहा था, किंतु डीएनए परीक्षण रिपोर्ट और जो हमने ऊपर देखा है, उसे ध्यान में रखते हुए, हम परिणाम की भविष्यवाणी नहीं कर सकते। यह सच्चाई को नकारना है. "सच्चाई की जीत होनी चाहिए" जो न्याय की पहचान है।*

3.3 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि किसी भी कानूनी प्रणाली का प्राथमिक उद्देश्य न्याय के निष्पक्ष और प्रभावी वितरण के लिए सच्चाई का पता लगाना है।

3.3.1 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी कहा कि कानून के तय प्रस्ताव के अनुसार, यदि पितृत्व से संबंधित कोई विवाद है, जैसा कि वर्तमान मामले में शामिल है, तो एक बच्चे और उसके पिता के बीच जैविक संबंध के बारे में सच्चाई बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। इसलिए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, डीएनए पितृत्व परीक्षण अधिकार का मामला है और किसी भी समय इसका दावा और अनुमति दी जा सकती है। इस तरह की दलील के समर्थन में, ***भवानी प्रसाद जेना बनाम संयोजक सचिव, उड़ीसा राज्य महिला एवं अन्य आयुक्त (2010) 8 एससीसी 633*** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा भरोसा किए गए ***भबानी प्रसाद (सुप्रा.)*** में दिए गए उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

> *"13. ऐसे मामले में जहां किसी बच्चे के पितृत्व का मुद्दा अदालत के सामने हो, डीएनए का उपयोग एक बेहद नाजुक और संवेदनशील पहलू है। एक दृष्टिकोण यह है कि जब आधुनिक विज्ञान किसी बच्चे के पितृत्व का पता लगाने के साधन देता है, तो अवसर पड़ने पर उन साधनों का उपयोग करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि अदालत को ऐसी वैज्ञानिक प्रगति और उपकरणों के उपयोग में अनिच्छुक होना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति की निजता के अधिकार पर आक्रमण होता है और यह न केवल पार्टियों के अधिकारों के लिए प्रतिकूल हो सकता है बल्कि बच्चे पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकता है। कभी-कभी ऐसे वैज्ञानिक परीक्षण के परिणाम एक मासूम बच्चे को बर्बाद कर सकते हैं, भले ही गर्भधारण के समय उसकी माँ और उसका जीवनसाथी एक साथ रह रहे हों। हमारे विचार में, जब किसी व्यक्ति की निजता के अधिकार और खुद को जबरन चिकित्सा परीक्षण के लिए प्रस्तुत न करने के अधिकार और सच्चाई तक पहुंचने के लिए अदालत के कर्तव्य के बीच स्पष्ट संघर्ष होता है, तो अदालत को पार्टियों के हितों को संतुलित करने के बाद ही अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए और इस बात पर उचित विचार करें कि क्या मामले में उचित निर्णय के लिए डीएनए की अत्यंत आवश्यकता है। किसी बच्चे के पितृत्व से संबंधित मामले में डीएनए को अदालत द्वारा स्वाभाविक रूप से*

या नियमित तरीके से निर्देशित नहीं किया जाना चाहिए, जब भी ऐसा अनुरोध किया जाता है। अदालत को साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत अनुमान सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होगा; इस तरह के आदेश के पक्ष और विपक्ष और 'प्रमुख आवश्यकता' का परीक्षण कि क्या अदालत के लिए ऐसे परीक्षण के उपयोग के बिना सच्चाई तक पहुंचना संभव नहीं है।''

4. अपीलार्थी-पति के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता को सुना और साथ ही न्यायालय में उद्धृत निर्णयों के साथ-साथ मामले के रिकॉर्ड का अवलोकन किया।

5. इस न्यायालय का मानना है कि अपीलार्थी-पति ने 1955 के अधिनियम की धारा 13 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें व्यभिचार का कोई आरोप नहीं है, और इसके बाद, अपीलार्थी-पति ने बच्चे (बेटे) का डीएनए पितृत्व परीक्षण कराने के बाद, जिसकी रिपोर्ट 11.09.2019 को आई, सीपीसी की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत एक आवेदन दायर किया गया, जिसमें उक्त रिपोर्ट के आधार पर कुछ पैरा जोड़ने की मांग की गई, जबकि इसके बाद की घटना होने का दावा किया गया।

5.1 उक्त आवेदन में यह भी दावा किया गया कि रिपोर्ट से स्पष्ट पता चलता है कि अपीलार्थी-पति बच्चे (बेटे) का जैविक पिता नहीं है।

5.2 हालाँकि, दलीलों में संशोधन के लिए धारा 151 सीपीसी के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के तहत उक्त आवेदन को विद्वान परिवार न्यायालय ने दिनांक 15.11.2022 के आक्षेपित आदेश के तहत खारिज कर दिया था।

5.3 अपीलार्थी-पति की ओर से उद्धृत निर्णय या तो माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया बनाम अजिंक्य अरुण फिरोदिया (एसएलपी (सी) संख्या 9855/2022** से उत्पन्न, जिसका निर्णय 20.02.2023 को हुआ, पलट दिए गए हैं या उक्त निर्णय वर्तमान तथ्यात्मक परिप्रेक्ष्य में लागू नहीं होते हैं।

6. यह न्यायालय, इस समय, अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के प्रासंगिक हिस्से को यहां निम्नानुसार पुनः पेश करना उचित समझता है:

"8.1. सरकार ऑन लॉ ऑफ एविडेंस, 20वें संस्करण के अनुसार, समाज

में स्वास्थ्य, व्यवस्था और शांति के हित में, कुछ स्वयंसिद्ध धारणाएँ बनानी होंगी। ऐसी ही एक धारणा साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत पितृत्व की निर्णायक धारणा है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 कानून के नियम का प्रतीक है कि वैध विवाह की निरंतरता के दौरान या उसके विघटन के बाद 280 दिनों के भीतर (अर्थात गर्भधारण की अवधि के भीतर) बच्चे का जन्म "निर्णायक प्रमाण" होगा कि बच्चा तब तक वैध है जब तक कि साक्ष्य द्वारा स्थापित किया गया है कि जब बच्चा गर्भ में आया, तब पति और पत्नी की एक-दूसरे तक पहुंच नहीं थी या नहीं हो सकती थी। इस प्रावधान का उद्देश्य वैध विवाह से पैदा हुए बच्चों को निर्विवाद वैधता प्रदान करना है। जब एक बच्चा वैध विवाह के निर्वाह के दौरान पैदा होता है, तो इसका मतलब यह होगा कि माता-पिता के पास एक-दूसरे तक पहुंच है। इसलिए, यह धारा वैध विवाह की अवधि के दौरान बच्चे के वैध जन्म के "निर्णायक सबूत" की बात करती है।

धारा 112 में अंतर्निहित सिद्धांत उस बच्चे के पितृत्व के बारे में अनुचित जांच को रोकना है, जिसके माता-पिता के पास प्रासंगिक समय पर एक-दूसरे तक "पहुंच" थी। *दूसरे शब्दों में, एक बार जब किसी विवाह को वैध मान लिया जाता है, तो उस विवाह से पैदा हुए बच्चों के वैध होने की प्रबल धारणा बन जाती है। इस धारणा का खंडन केवल इसके विपरीत मजबूत, स्पष्ट और निर्णायक साक्ष्य द्वारा ही किया जा सकता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 शाम लाल बनाम संजीव कुमार, (2009) 12 एससीसी 454 के तहत सार्वजनिक नैतिकता और सार्वजनिक नीति की धारणा पर आधारित है। चूंकि धारा 112 वैधता की धारणा बनाती है कि विवाह के निर्वाह के दौरान पैदा हुआ बच्चा वैध माना जाता है, उस व्यक्ति पर बोझ डाला जाता है जो बच्चे की वैधता पर सवाल उठाता है।*

8.2. इसके अलावा, "पहुंच" या "गैर-पहुंच" का मतलब वास्तविक सहवास नहीं है, बल्कि यौन संबंधों के अवसरों का "अस्तित्व" या "गैर-

अस्तित्व" है। धारा 112 जन्म के समय को महत्वपूर्ण पहलू के रूप में संदर्भित करती है न कि गर्भधारण के समय को। गर्भधारण का समय केवल यह देखने के लिए प्रासंगिक है कि पति की पत्नी तक पहुंच थी या नहीं। इस प्रकार, विवाह की निरंतरता के दौरान जन्म वैधता का "निर्णायक प्रमाण" है जब तक कि उस पक्ष की "गैर-पहुंच" जो बच्चे के जन्म के समय बच्चे के पितृत्व पर सवाल उठाता है, उक्त पक्ष द्वारा साबित नहीं किया जाता है।

8.3. इस संदर्भ में यह ध्यान देना आवश्यक है कि बच्चे की वैधता के प्रमाण के संदर्भ में "निर्णायक प्रमाण" क्या है, जैसा कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 में कहा गया है। "निर्णायक सबूत" के अर्थ के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 4 का संदर्भ दिया जा सकता है, जो यह प्रावधान करती है कि जब एक तथ्य को दूसरे तथ्य का निर्णायक सबूत घोषित किया जाता है, तो एक तथ्य का प्रमाण स्वचालित रूप से दूसरे तथ्य को साबित कर देगा, जब तक कि इस प्रकार सिद्ध तथ्य को झुठलाने के उद्देश्य से विपरीत साक्ष्य न दिया जाए। साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 की धारा 4 के तहत "निर्णायक सबूत" की परिभाषा के साथ संयुक्त रूप से पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैध विवाह के दौरान पैदा हुए बच्चे को वैध बच्चा माना जाना चाहिए, सिवाय इसके कि यह दिखाया गया है कि विवाह के पक्षकारों को किसी भी समय जब बच्चा पैदा हो सकता था या विवाह विच्छेद के 280 दिनों के भीतर एक-दूसरे तक पहुंच नहीं थी और मां अविवाहित रहती है, यह तथ्य इस बात का निर्णायक प्रमाण है कि बच्चा है आदमी का वैध पुत्र है। प्रासंगिक समय पर गैर-पहुंच साबित करके निर्णायक अनुमान पर विचार करने से बचा जा सकता है।

8.4. साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 का उत्तरार्ध इंगित करता है कि यदि कोई व्यक्ति यह स्थापित करने में सक्षम है कि विवाह के पक्षों की किसी भी समय एक-दूसरे तक पहुंच नहीं थी, जब बच्चा पैदा हो सकता था, तो ऐसे बच्चे की वैधता से इनकार किया जा सकता है। अर्थात, यह

मजबूत और ठोस सबूतों से साबित होना चाहिए कि गंभीर बीमारी या नपुंसकता के कारण उनके बीच पहुंच असंभव थी या उस अवधि के दौरान जब बच्चा पैदा हुआ होगा, पार्टियों के बीच यौन संबंध की कोई संभावना नहीं थी। इस प्रकार, जब तक पहुंच की अनुपस्थिति स्थापित नहीं हो जाती, वैधता की धारणा को विस्थापित नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, जहां पति और पत्नी ने एक साथ सहवास किया है, और कोई नपुंसकता साबित नहीं हुई है, उनके विवाह से पैदा हुआ बच्चा निर्णायक रूप से वैध माना जाता है, भले ही पत्नी को उसी समय बेवफाई का दोषी दिखाया गया हो। यह तथ्य कि एक महिला व्यभिचार में रह रही है, अपने आप में एक बच्चे की वैधता के पक्ष में निर्णायक धारणा को खारिज करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी। इसलिए, इस आशय के साक्ष्य के टुकड़े कि पति ने गर्भधारण के समय पत्नी के साथ संभोग नहीं किया था, केवल विवाह से पैदा हुए बच्चे की अवैधता की ओर इशारा कर सकता है, लेकिन यह धारा 112 के तहत वैधता की धारणा को खत्म नहीं करेगा।

8.5. धारा 112 के तहत अनुमान केवल तभी लगाया जा सकता है जब बच्चा वैध विवाह की निरंतरता के दौरान पैदा हुआ हो, अन्यथा नहीं। "पहुंच" या "गैर-पहुंच" संभोग के संदर्भ में होनी चाहिए, अर्थात यौन संबंधी में और इसलिए, उस संकीर्ण अर्थ में। उदाहरण के लिए, न केवल तब पहुंच असंभव हो सकती है जब पति उस अवधि के दौरान दूर हो जब बच्चा पैदा हो सकता था या विभिन्न कारणों से नपुंसकता या अक्षमता के कारण या पति की मृत्यु के बाद समय बीतने के कारण। इस प्रकार, भले ही पति एक साथ रह रहा हो, फिर भी पति-पत्नी के बीच अनबन हो सकती है। सहवास के बावजूद न पहुंच पाने का एक उदाहरण पति की नपुंसकता है। यदि पति की पहुंच है, तो पत्नी की ओर से व्यभिचार अवैधता के निष्कर्ष को उचित नहीं ठहराएगा।

8.6. इस प्रकार, "गैर-पहुँच" को एक तथ्य के रूप में साबित किया जाना चाहिए और इसे स्पष्ट चरित्र के प्रत्यक्ष और परिस्थितिजन्य साक्ष्य

द्वारा स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार, सह-वास के बावजूद पति-पत्नी के बीच "गैर-पहुँच" हो सकती है। इसके विपरीत, वास्तविक सह-वास के अभाव में भी पहुंच हो सकती है।

8.7. धारा 112 ऐसे समय में अधिनियमित की गई थी जब आधुनिक वैज्ञानिक परीक्षण जैसे डीएनए परीक्षण, साथ ही राइबोन्यूक्लिक एसिड परीक्षण (संक्षेप में 'आरएनए') विधायिका के विचार में नहीं थे। हालाँकि, वास्तविक डीएनए परीक्षण का परिणाम भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत अनुमान की निर्णायकता से बच नहीं सकता है। यदि गर्भधारण के समय पति-पत्नी एक साथ रह रहे थे, लेकिन डीएनए परीक्षण से पता चलता है कि बच्चा पति से पैदा नहीं हुआ था, तो कानून में निष्कर्ष अपरिवर्तनीय रहेगा। जो साबित किया जाएगा, वह पत्नी की ओर से व्यभिचार है, हालाँकि, बच्चे की वैधता अभी भी कानून में निर्णायक होगी। दूसरे शब्दों में, वैध विवाह के निर्वाह के दौरान पैदा हुए बच्चे के पितृत्व की निर्णायक धारणा यह है कि बच्चा पति का है और इसे केवल डीएनए परीक्षण रिपोर्ट द्वारा खारिज नहीं किया जा सकता है। जिस बात का खंडन करना आवश्यक है वह उस समय गैर-पहुँच का प्रमाण है जब बच्चे को जन्म दिया जा सकता था, अर्थात, कामती देवी बनाम पोशी राम, (2001) 5 एससीसी 311 दावें उसके गर्भाधान के समय।

.....

22.3. इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि यदि डीएनए परीक्षण में अवैधता का खुलासा हो जाता है, तो कम से कम बच्चे पर मनोवैज्ञानिक रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इससे न केवल बच्चे के मन में भ्रम पैदा हो सकता है, बल्कि यह पता लगाने की कोशिश भी हो सकती है कि असली पिता कौन है और एक ऐसे व्यक्ति के प्रति मिश्रित भावना पैदा हो सकती है, जिसने बच्चे का पालन-पोषण किया हो, लेकिन वह जैविक पिता नहीं है। यह न जानना कि उसका पिता कौन है, बच्चे में मानसिक आघात पैदा करता है। कोई कल्पना कर सकता है कि

जैविक पिता की पहचान जानने के बाद एक युवा मन पर कितना बड़ा आघात और तनाव प्रभाव डालेगा। जो कार्यवाही रेम में होती है उसका न केवल बच्चे पर बल्कि माँ और बच्चे के बीच के रिश्ते पर भी वास्तविक प्रभाव पड़ता है जो अन्यथा उत्कृष्ट है। ऐसा कहा गया है कि किसी बच्चे के माता-पिता के बीच नाजायज रिश्ता हो सकता है, लेकिन ऐसे रिश्ते से पैदा हुआ बच्चा अपने माथे पर नाजायज का ठप्पा नहीं लगा सकता, क्योंकि ऐसे बच्चे के जन्म में उसकी कोई भूमिका नहीं होती है। एक मासूम बच्चे को उसके पितृत्व की खोज के लिए आघात नहीं पहुंचाया जा सकता है और न ही उसे अत्यधिक तनाव और दबाव का सामना करना पड़ सकता है। इसीलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 एक बच्चे के पितृत्व के संबंध में एक निर्णायक धारणा के बारे में बात करती है, जो खंडन के अधीन है, जैसा कि धारा के दूसरे भाग में प्रदान किया गया है।

आज की दुनिया में, किसी बच्चे के पितृत्व का दावा करने की होड़ भी हो सकती है ताकि उसके अधिकारों पर हमला किया जा सके, खासकर, अगर ऐसा बच्चा संपत्ति और धन से संपन्न है। किसी बच्चे के पितृत्व पर संदेह करने वाले वसीयतनामा में बहिष्करण भी हो सकता है या केवल बच्चे के पितृत्व पर संदेह करके माता-पिता के दायित्वों से बचना जैसे कि रखरखाव या रहने और शैक्षिक खर्चों का भुगतान

कई मामलों में, इससे बच्चे की मां की पवित्रता पर संदेह पैदा हो जाएगा जबकि ऐसा कोई संदेह पैदा ही नहीं हो सकता। परिणामस्वरूप, समाज में एक बच्चे की मां की प्रतिष्ठा और गरिमा खतरे में पड़ जाएगी। एक महिला के लिए जो एक बच्चे की मां है, सबसे महत्वपूर्ण बात अपनी पवित्रता के साथ-साथ अपनी गरिमा और प्रतिष्ठा की रक्षा करना है, इसमें वह अपने बच्चे की गरिमा की भी रक्षा करेगी।

साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत किसी भी महिला, विशेष रूप से, जो विवाहित है, को उसके द्वारा जन्म दिए गए बच्चे के पितृत्व की जांच के लिए उजागर नहीं किया जा सकता है, बशर्ते कि यह

अनुमान मजबूत और ठोस सबूतों द्वारा खंडित किया गया हो। धारा 112 विशेष रूप से विवाह के दौरान बच्चे के जन्म के बारे में बात करती है और वैधता के बारे में एक निर्णायक धारणा बनाती है। धारा 112 में विवाह की संस्था को मान्यता दी गई है, अर्थात, ऐसे विवाह के अस्तित्व के दौरान पैदा हुए बच्चों को वैधता प्रदान करने के उद्देश्य से एक वैध विवाह।

वैध विवाह से बाहर पैदा हुए बच्चों के संबंध में, संबंधित पक्षों का व्यक्तिगत कानून लागू होगा। लेकिन उन बच्चों के मामले में जो विवाह की प्रकृति के रिश्ते से पैदा हुए हैं और जब माता-पिता घरेलू रिश्ते में हैं या जो यौन उत्पीड़न के परिणामस्वरूप पैदा हुए हैं या जो आकस्मिक रिश्ते में हैं या जिनके साथ जबरदस्ती या उत्पीड़न किया गया है यौन संबंध बनाने और बच्चे पैदा करने से उनकी वैधता की समस्या जटिल और गंभीर हो जाती है।

एक बच्चे को पितृत्व की तलाश में भटकना नहीं चाहिए। किसी के पितृत्व के बारे में जानने की खोज में बहुमूल्य बचपन और युवावस्था को बर्बाद नहीं किया जा सकता। इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 का संपूर्ण उद्देश्य, जो एक वैध विवाह के अस्तित्व के दौरान पैदा हुए बच्चों को वैधता प्रदान करता है, बशर्ते कि इसका खंडन ठोस और मजबूत सबूतों द्वारा किया गया हो, को संरक्षित किया जाना है।

आज के बच्चे देश के नागरिक और भविष्य हैं। जिस बच्चे को माता-पिता दोनों प्यार और स्नेह देते हैं उसका आत्मविश्वास और खुशी उस बच्चे से बिल्कुल अलग होती है जिसके माता-पिता नहीं हैं या जिसने माता-पिता को खो दिया है और इससे भी बदतर स्थिति उस बच्चे की है जिसका पितृत्व बिना किसी संदेह इसके लिए कोई ठोस कारण होना है। *जिस बच्चे के पितृत्व और इस प्रकार उसकी वैधता पर सवाल उठाया जाता है, उसकी दुर्दशा भ्रम के भंवर में डूब जाएगी, जिसे उलझाया जा सकता है यदि न्यायालय सबसे विवेकपूर्ण और सतर्क तरीके से विवेक का प्रयोग करने के लिए सतर्क और जिम्मेदार नहीं हैं।*

.....

23. 'नाजायज़'- एक ऐसा शब्द जो किसी व्यक्ति पर विवाह के बाहर पैदा होने की शर्मिंदगी का ठप्पा लगाता है, उसकी पहचान पर ग्रहण लगाता है। समय बदलता है और नजरिया बदल सकता है, लेकिन नाजायज होने के सामाजिक कलंक के साथ बड़े होने का असर नहीं बदलता। इसलिए अदालतों को बच्चे की वैधता को बरकरार रखने की ओर झुकना चाहिए, जब तक कि तथ्य इतने बाध्यकारी और ठोस न हों कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि बच्चा बिल्कुल भी पिता से पैदा नहीं हुआ है और इस तरह बच्चे का वैधीकरण पिता के साथ अन्याय होगा, दुख्तार जहां बनाम मोहम्मद फारूक, (1987) 1 एससीसी 624 दावें।

24. किसी बच्चे की नाजायजता से संबंधित प्रश्न केवल व्यभिचार या बेवफाई के आधार पर विवाह विच्छेद के दावे के लिए प्रासंगिक हैं। यह ऐसा मामला नहीं है जहां डीएनए परीक्षण मां के व्यभिचार के संबंध में सच्चाई का एकमात्र रास्ता है। यदि कार्यवाही में बच्चों का पितृत्व मुद्दा है, तो सच्चाई स्थापित करने के लिए डीएनए परीक्षण ही एकमात्र मार्ग हो सकता है। हालाँकि, हमारी राय में, वर्तमान मामले में ऐसा नहीं है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत उपलब्ध निर्णायक अनुमान का खंडन करने के लिए डीएनए परीक्षण के साक्ष्य की अनुमति केवल तभी दी जा सकती है जब 'पहुंच' से जुड़ी बाध्यकारी परिस्थितियां हों, जिनका उदारतापूर्वक उपयोग नहीं किया जा सकता है जैसा कि इस न्यायालय ने दीपनविता रॉय (सुप्रा.) में चेतावनी दी थी।

*9. <u>यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि साक्ष्य अधिनियम में विवाह के दौरान जन्म की वैधता शामिल नहीं है, या तो उस तथ्य की श्रेणी के अंतर्गत जिसे "माना जा सकता है" या उस तथ्य की श्रेणी के अंतर्गत जिसे "माना जाएगा"। इसके विपरीत, अधिनियम विवाह के दौरान जन्म को वैधता के "निर्णायक प्रमाण" के रूप में रखता है। लेकिन धारा **112** एक खिड़की खुली रखती है, जो विवाह के उस पक्ष को सक्षम बनाती है जो बच्चे की वैधता पर सवाल उठाता है, यह दिखाने के लिए कि उसने</u>*

दूसरे को जन्म दिया है, जबकि बच्चा पैदा किया जा सकता था।

***11.** धारा **4** और धारा **112** को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलता है कि एक बार बच्चे के जन्म की वैधता पर सवाल उठाने वाले पक्ष को पता चलता है कि विवाह के पक्षों की एक-दूसरे तक कोई पहुंच नहीं है, तो धारा **112** को लागू करने से पार्टी को धारा **112** का लाभ पार्टी को उपलब्ध नहीं है। दूसरे शब्दों में, यदि विवाह का एक पक्ष यह स्थापित करता है कि विवाह में दूसरे पक्ष की कोई पहुंच नहीं थी, तो निर्णायक सबूत की ढाल अनुपलब्ध हो जाती है। यदि इसके विपरीत, ऐसा पक्ष यह साबित करने में सक्षम नहीं है कि उसकी शादी के लिए दूसरे पक्ष तक कोई पहुंच नहीं है, तो धारा **112** की ढाल दूसरे पक्ष की इस हद तक रक्षा करती है कि धारा **4** में निहित निषेध को ध्यान में रखते हुए।*

उसे किसी भी सबूत से नहीं तोड़ा जा सकता है।

21. लेकिन हम नहीं जानते कि धारा 112 और धारा का मिश्रण सम्भव है 114 संभव है धारा 112 कुछ ऐसी चीज़ से संबंधित है जहां किसी तथ्य के अस्तित्व को निर्णायक सबूत के रूप में लिया जाता है, विवाद करने वाले पक्ष के लिए उसे अस्वीकार करने के लिए सबूत पेश करने की कोई संभावना नहीं होती है। धारा 112 के लाभ से किसी अन्य व्यक्ति को वंचित करने के लिए एक व्यक्ति के लिए उपलब्ध एकमात्र बचाव का मार्ग या आपातकालीन निकास, जैसा कि हम इसे कह सकते हैं, यह दिखाना है कि विवाह के समय पार्टियों के पास एक-दूसरे तक पहुंच नहीं थी। पैदा किया जब बच्चा जा सकता था। धारा 114 का कोई लेना-देना नहीं है, न ही धारा 112 की वैधता के निर्णायक सबूत के संबंध में है। धारा 112 और धारा 114 दोनों अलग-अलग हैं। धारा 112 में "अनुमान" शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। धारा 112 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "निर्णायक प्रमाण" है। इसलिए, धारा 4 के आधार पर, इसे अस्वीकार करने के उद्देश्य से कोई साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

22. जैसा कि हमने अन्यत्र संकेत दिया है, यदि विवाह के पक्षों में से

एक यह दर्शाता है कि उस समय जब बच्चा पैदा किया जा सकता था, तब दूसरे तक उसकी कोई पहुंच नहीं थी, तो धारा 112 स्वयं लागू नहीं होती है। इसके विपरीत, यदि पार्टियों के पास प्रासंगिक समय पर एक-दूसरे तक पहुंच है, तो वैधता से संबंधित प्रश्न का भाग्यशील हो जाता है।

23. हम एक पल के लिए भी यह सुझाव नहीं दे रहे हैं कि धारा 112 पत्नी के कथित व्यभिचारी आचरण के लिए भी ढाल के रूप में कार्य करती है। हम बस इतना कहते हैं कि धारा 112 के कानूनी प्रभाव को नष्ट करने वाली किसी भी चीज़ का उपयोग प्रत्यर्थी द्वारा इस आधार पर नहीं किया जा सकता है कि वही कार्य किसी अन्य परिणाम को प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है।

.....

29. इसलिए, धारा 114(ज) उस मामले में लागू नहीं होती जहां मां बच्चे का डीएनए परीक्षण कराने से इनकार करती है। यह याद रखना चाहिए कि बच्चे पर डीएनए परीक्षण करने का उद्देश्य मुख्य रूप से यह दिखाना है कि प्रत्यर्थी उसका जैविक पिता नहीं था। एक बार जब यह तथ्य स्थापित हो जाता है, तो यह केवल एक परिणाम के रूप में सामने आता है कि अपीलार्थी व्यभिचारी रिश्ते में रह रहा था।

30. डीएनए परीक्षण से जो बात सामने आती है, वह मुख्य उत्पाद के रूप में बच्चे का पितृत्व होता है, जिसका परीक्षण किया जाता है। संयोगवश, पत्नी का व्यभिचारी आचरण भी उसी प्रक्रिया के माध्यम से, एक उप-उत्पाद के रूप में, स्थापित होता है। यह कहना कि पत्नी को बच्चे का डीएनए परीक्षण कराने की अनुमति देनी चाहिए, ताकि पति को उत्पाद और उप-उत्पाद दोनों का लाभ मिल सके या वैकल्पिक रूप से पत्नी को पति को उप-उत्पाद का लाभ लेने की अनुमति देनी चाहिए, धारा 114 लागू करके, यदि वह बच्चे का डीएनए परीक्षण नहीं कराने का विकल्प चुनती है, तो वास्तव में शैतान और गहरे समुद्र के बीच चुनाव करना पत्नी पर छोड़ना है।

33. जैसा कि अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री हुज़ेफ़ा अहमदी

ने सही तर्क दिया है, यह प्रश्न कि क्या बच्चे पर डीएनए परीक्षण की अनुमति दी जानी चाहिए, का विश्लेषण बच्चे के चश्मे से किया जाना चाहिए, न कि माता-पिता के चश्मे से। बच्चे को यह दिखाने के लिए मोहरे के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता कि बच्चे की माँ व्यभिचार में जी रही थी। प्रत्यर्थी पति के लिए यह हमेशा खुला है कि वह अन्य सबूतों से पत्नी के व्यभिचारी आचरण को साबित कर सके, लेकिन बच्चे की पहचान के अधिकार का बलिदान नहीं दिया जाना चाहिए।

6.1 यह न्यायालय 2022 की आपराधिक रिट याचिका संख्या 66, दिनांक 10.03.2023 को निर्णयित) में माननीय बॉम्बे उच्च न्यायालय की नागपुर पीठ द्वारा दिए गए निर्णय के प्रासंगिक हिस्से को पुनः प्रस्तुत करना भी उचित समझता है, जो निम्नलिखित है:

"25. इसलिए, मेरे विचार में, आवेदन पर निर्णय लेते समय इन सभी तथ्यों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। बच्चों को यह अधिकार है कि कानून की अदालतों में उनकी वैधता पर हल्के-फुल्के सवाल न उठाए जाएं। डीएनए परीक्षण का आदेश इस धारणा पर नहीं दिया जा सकता कि मां, जो पितृत्व के बारे में समान रूप से सच्चाई जानती है, को आगे आकर डीएनए परीक्षण के लिए अपनी इच्छा व्यक्त करने में एक मिनट के लिए भी संकोच नहीं करना चाहिए। ध्यान देने वाली बात यह है कि ऐसे मामले में परीक्षा में बच्चा होता है, मां नहीं। इसलिए, ऐसे मामलों में, किसी गंभीर मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए इस तरह के परीक्षण की नितांत आवश्यकता और जरूरत पर विचार किया जाना चाहिए। इस मामले में, पिता, जो लाभकारी रूप से नियोजित है, दुर्भाग्यपूर्ण बच्चे को भरण-पोषण का भुगतान करने के अपने दायित्व से बचने की कोशिश कर रहा है। भरण-पोषण पाने के अधिकार से वंचित करने के लिए वह बेटे से डीएनए टेस्ट कराने को कह रहे हैं। मेरे विचार में, इसके व्यापक परिणामों को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय को हर संभव तरीके से इस तरह के प्रयास को शुरुआत में ही विफल कर देना चाहिए। ऐसे मामलों में डीएनए परीक्षण का निर्देश देने वाला आदेश आवश्यकता-आधारित होना चाहिए और एक असाधारण मामले में पारित

किया जाना चाहिए 26] तथ्यों और परिस्थितियों में, मेरे विचार में, विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश निर्धारित कानून के मापदंडों के भीतर अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में निर्णय में बिल्कुल ठीक थे निर्णय में

6.2 ***अनिल कपूर बनाम दीपिका चौहान (2022 का सिविल रिवीजन नंबर 66,*** 01.04.2023 को निर्णय लिया गया) के मामले में माननीय हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के प्रासंगिक हिस्से को पुनः प्रस्तुत करने पर भी विचार किया गया है:

"निष्कर्ष:-

"रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों को देखते हुए, यह स्पष्ट है कि जोड़े की एक-दूसरे तक पहुंच थी। पति ने तलाक की याचिका पर अपनी दलीलों में अपनी पत्नी तक पहुंच से इनकार भी नहीं किया है। उसने विशेष रूप से पीडब्लू-1 के रूप में पेश होने के दौरान अपनी पत्नी तक पहुंच की बात स्वीकार की है और आगे कहा है कि वह सप्ताहांत के दौरान अपनी पत्नी के साथ रहता था। इस प्रकार, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत अनुमान लागू होता है। बच्चे का जन्म जोड़े के बीच एक-दूसरे तक पहुंच होने और उनके बीच वैध विवाह के अस्तित्व के दौरान हुआ था। यह शिशु की वैधता का निर्णायक प्रमाण है। ऐसी परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता (पति) द्वारा मांगे गए तरीके से बच्चे के पितृत्व का पता लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह अपीलार्थी पर निर्भर है कि वह अपने द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर प्रत्यर्थी (पत्नी) के खिलाफ क्रूरता और परित्याग के अपने आरोपों को साबित करे। उसे बच्चे और पक्षों का डीएनए परीक्षण कराने की मांग करके, यदि कोई हो, अपने साक्ष्य में कमी को पूरा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। "

7. यह न्यायालय इस मामले से संबंधित घटनाओं के कालक्रम का अवलोकन करना भी उचित समझता है, जैसा कि यहां दिया गया है-:

क) अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी के बीच विवाह 06.02.2010 को संपन्न हुआ

था।

ख) को हुआ था।

ग) प्रत्यर्थी-पत्नी ने 05.01.2019 को अपीलार्थी का घर छोड़ दिया।

घ) तलाक का आवेदन अपीलार्थी-पति द्वारा 17.01.2019 को विद्वान परिवार न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था, व्यभिचार का कोई आधार नहीं लेते हुए, लेकिन केवल इस तथ्य का उल्लेख करते हुए कि प्रत्यर्थी-पत्नी उसे बताती थी, कि वह (अपीलार्थी)-पति) बच्चे का पिता नहीं है।

ङ) याचिकाकर्ता ने बच्चे (बेटे) का डीएनए पितृत्व परीक्षण डीएनए पितृत्व परीक्षण फोरेंसिक प्रयोगशाला, नई दिल्ली में करवाया; जिसकी रिपोर्ट 11.09.2019 को आई। इसके लिए बच्चे या उसकी मां (प्रत्यर्थी-पत्नी) को विश्वास में नही लिया गया।

8. यह न्यायालय वर्तमान मामले में उठाए गए निम्नलिखित मुद्दों पर विचार करना भी उचित समझता है:

I. क्या किसी वैवाहिक मामले में पितृत्व/व्यभिचार को साबित या अस्वीकार करने के लिए पत्नी को अपने बेटे (बच्चे) का डीएनए देने के लिए मजबूर किया जा सकता है:

(i) इस समय, प्रासंगिक प्रावधान अर्थात भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत करना उचित माना जाता है-:

> ***"112.*** *विवाह के दौरान जन्म, वैधता का निर्णायक प्रमाण। —*
>
> *यह तथ्य कि किसी व्यक्ति का जन्म उसकी मां और किसी पुरुष के बीच वैध विवाह की निरंतरता के दौरान या उनके अलग होने के दो सौ अस्सी दिनों के भीतर हुआ था, मां अविवाहित रही, निर्णायक प्रमाण होगा कि वह उस व्यक्ति का वैध पुत्र है, जब तक कि यह नहीं दिखाया जा सके कि विवाह के पक्षकारों के पास किसी भी समय एक-दूसरे तक पहुंच नहीं थी जब वह पैदा हो सकता था।*

(ii) इस न्यायालय ने पाया कि इस मुद्दे को अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निपटाया गया है, जबकि यह देखते हुए कि पारिवारिक न्यायालयों के पास डीएनए परीक्षण के लिए आदेश देने की शक्ति है, लेकिन

ऐसा नहीं होना चाहिए बिना किसी उचित कारण के नियमित तरीके से निर्देशित; प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का विधिवत अनुपालन करने के बाद ही ऐसा किया जाना चाहिए। इस प्रकार, पति डीएनए परीक्षण का अनुचित लाभ नहीं उठा सकता है ताकि बच्चे के पिता के रूप में अपने दायित्व से बच सके।

(iii) यह न्यायालय आगे मानता है कि डीएनए परीक्षण आयोजित करने का निर्देश केवल तभी दिया जा सकता है, जब मामला भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के तहत प्रदान की गई धारणा से बाहर हो, जैसा कि यहां ऊपर उद्धृत किया गया है। अपर्णा अजिंक्य फ़िरोदिया (सुप्रा.) के मामले में, यह इस प्रकार देखा गया:

> *"11.1. निस्संदेह, पारिवारिक न्यायालय के पास किसी व्यक्ति को डीएनए परीक्षण सहित चिकित्सा परीक्षण कराने का निर्देश देने की शक्ति है और ऐसा आदेश संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन नहीं होगा, शारदा देखें। हालाँकि, न्यायालय को ऐसी शक्ति का प्रयोग केवल तभी करना चाहिए जब ऐसा करना न्याय के हित में समीचीन हो, और जब किसी दिए गए मामले में तथ्यात्मक स्थिति इस तरह के अभ्यास की आवश्यकता हो। इस प्रकार, एक नाबालिग बच्चे का डीएनए परीक्षण कराने का निर्देश देने वाला आदेश प्रत्येक मामले में यंत्रवत् पारित नहीं किया जाना चाहिए।*
>
> *वैध विवाह के अस्तित्व के दौरान पैदा हुए बच्चों के डीएनए परीक्षण का निर्देश तभी दिया जा सकता है, जब साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत धारणा को खारिज करने के लिए पर्याप्त प्रथम दृष्टया सामग्री हो। इसके अलावा, यदि साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के तहत अनुमान का खंडन करने के लिए गैर-पहुंच के बारे में कोई दलील नहीं दी गई है, तो डीएनए परीक्षण का निर्देश नहीं दिया जा सकता है।*

(iv) *यह न्यायालय आगे मानता है कि अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि "पहुंच" या "गैर-पहुंच" का मतलब वास्तविक सहवास नहीं है, बल्कि यौन संबंध के अवसरों का अस्तित्व" का "अस्तित्व" या "गैर-पहुंच" है।*

(v) इस न्यायालय का मानना है कि वर्तमान मामले में, अपीलार्थी-पति का विवाह प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ वर्ष 2010 में हुआ था, और बच्चे (बेटे) का जन्म 13.04.2018 को हुआ था; पत्नी ने 05.01.2019 को अपने पति (अपीलार्थी) का घर छोड़ दिया। मामले के रिकॉर्ड से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी बच्चे (बेटे) के जन्म के समय एक साथ रह रहे थे, और इस प्रकार, अपीलार्थी-पति को सहवास की सुविधा प्राप्त थी; इस प्रकार, वर्तमान मामले में भारतीय साक्ष्य की धारा 112 के तहत अनुमान के संबंध में प्रश्न ही नहीं उठता है। इसके अलावा, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित उपरोक्त कानून के मद्देनजर इस मुद्दे पर किसी और स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है।

II. क्या पति और पत्नी के बीच मुकदमेबाजी में व्यभिचार से संबंधित सिविल गलत/वैवाहिक गलत के किसी भी बिंदु को साबित करने के लिए पितृत्व को एक आवश्यकता के रूप में माना जाना चाहिए। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि व्यभिचार को पहले ही अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया गया है:

(i) इस न्यायालय का मानना है कि ***जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ (2019) 3 एससीसी 39*** के मामले में दिए गए निर्णय में माननीय शीर्ष न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा व्यभिचार के कृत्य को पहले ही अपराध की श्रेणी से हटा दिया गया है। यह न्यायालय भी यह देखता है कि विवाह से पैदा हुए बच्चे से संबंधित पति और पत्नी के बीच किसी भी वैवाहिक (सिविल) विवाद को अन्य चीजों के अलावा डीएनए पितृत्व परीक्षण के माध्यम से अपने लाभ के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है।

(ii) यह न्यायालय इस तथ्य के प्रति काफी सचेत है कि पति या पत्नी के किसी भी तुच्छ दावे का बच्चे के मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा; हालाँकि पति को अपनी पत्नी के खिलाफ ठोस सबूतों के आधार पर व्यभिचार साबित करने का अधिकार है।

(iii) यह न्यायालय यह भी मानता है कि डीएनए पितृत्व परीक्षण केवल असाधारण मामलों में कराए जाने की आवश्यकता है, और इसलिए, डीएनए पितृत्व परीक्षण के परिणाम के आधार पर, बच्चे को व्यभिचार के आधार पर तलाक लेने के लिए एक हथियार के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है। .

(iv) यह न्यायालय आगे कहता है कि अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में

माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि, "व्यभिचार को साबित करने के लिए, नियमित आधार पर डीएनए परीक्षण करने की अनुमति देना, को फिर से परिभाषित करने जैसा होगा। कहावत, "पेटर इस्ट क्वेम नुप्टिया डेमोंस्ट्रेंट" जिसका अर्थ है, पिता वह है जिसे विवाह में शामिल होने वाले लोग इंगित करते हैं। व्यभिचार और बेवफाई के आरोपों से निपटने के दौरान, बच्चे के डीएनए परीक्षण का अनुरोध न केवल धारा 112 के तहत अनुमान के साथ प्रतिस्पर्धा करता है, बल्कि शारीरिक स्वायत्तता की अनिवार्यता के साथ भी टकराव करता है। . . . .यदि अपीलार्थी स्वयं को लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से कुछ करती है या करने से इनकार करती है, तो उसके खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सकता है। लेकिन एक मां और प्राकृतिक अभिभावक के रूप में अपनी क्षमता में यदि अपीलार्थी बच्चे के हितों और कल्याण की सुरक्षा के लिए बच्चे का डीएनए परीक्षण कराने से इनकार करती है, तो उसके खिलाफ व्यभिचार का कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। बच्चे का डीएनए परीक्षण कराने से इनकार करके, वह वास्तव में बच्चे के सर्वोत्तम हितों की रक्षा कर रही है। बच्चे के सर्वोत्तम हितों की रक्षा के लिए, अपीलकर्ता-पत्नी को पुरस्कृत किया जा सकता है, लेकिन प्रतिकूल निष्कर्ष से दंडित नहीं किया जा सकता है। धारा 114(ज) का सहारा लेकर, प्रत्यर्थी अपीलकर्ता को मुश्किल स्थिति में नहीं डाल सकता। . . . .बच्चे को यह दिखाने के लिए मोहरे के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता कि बच्चे की मां व्यभिचार में जी रही थी। प्रत्यर्थी पति के लिए यह हमेशा खुला है कि वह अन्य सबूतों से पत्नी के व्यभिचारी आचरण को साबित कर सके, लेकिन बच्चे की पहचान के अधिकार का बलिदान नहीं दिया जाना चाहिए

III. <u>पितृत्व परीक्षण का बच्चे पर प्रभाव और ऐसे परीक्षण को अनुमति दी जानी चाहिए या रिकॉर्ड में लिया जाना चाहिए और</u>

IV. <u>पितृत्व परीक्षण की आवश्यकता और वैवाहिक कानून में इसके निहितार्थ:</u>

(i) इस न्यायालय का मानना है कि डीएनए पितृत्व परीक्षण को नियमित और यांत्रिक तरीके से आयोजित करने या कराए जाने का आदेश नहीं दिया जा सकता है, क्योंकि यह निश्चित रूप से बच्चे के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। ऐसे में यह देखना जरूरी है कि पति-पत्नी के बीच कोई पहुंच है या नहीं।

(ii) यह न्यायालय अपर्णा अजिंक्य फ़िरोदिया (सुप्रा.) में आगे देखता है कि "धारा 4 और धारा 112 को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलता है कि एक बार बच्चे के जन्म की

वैधता पर सवाल उठाने वाली पार्टी से पता चलता है कि विवाह के पक्षकारों के पास कोई पहुँच नहीं थी, एक-दूसरे के लिए, तो धारा 112 का लाभ धारा लागू करने वाले पक्ष को उपलब्ध नहीं है।

(iii) यह न्यायालय यह भी मानता है कि बच्चों के अधिकार किसी भी राष्ट्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि किसी भी देश की भविष्य की संभावनाएं बच्चों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर निर्भर करती हैं; यह भारत के संविधान के साथ-साथ बच्चों के अधिकारों की रक्षा के लिए माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित विभिन्न कानूनों के तहत भी प्रतिष्ठापित है; इसलिए, ऐसे अधिकारों को, दूसरों के बीच, पति और पत्नी के बीच वैवाहिक विवाद द्वारा, विशेष रूप से, उनके व्यक्तिगत लाभों के लिए प्रभावित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(iv) इसलिए, संबंधित पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि वह पहले यह साबित करे कि पति और पत्नी के बीच कोई पहुंच नहीं थी, और उसके बाद ही, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के दायरे से असाधारण बहिष्करण का लाभ पीड़ित पक्ष को दिया जा सकता है।

(v) वर्तमान मामले में, अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी बच्चे (बेटे) के जन्म के समय एक साथ रह रहे थे, और इस प्रकार, उन्हें सहवास के लिए एक-दूसरे तक पहुंच प्राप्त थी; इसलिए, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 के तहत प्रदान की गई धारणा वर्तमान मामले में नहीं बनाई जा सकती, जैसा कि अपीलार्थी-पति ने दावा किया है।

(vi) *यह न्यायालय आगे मानता है कि बच्चे के सर्वोत्तम हित की रक्षा के लिए, डीएनए पितृत्व परीक्षण को नियमित तरीके से अनुमति नहीं दी जा सकती है, और इसे केवल असाधारण परिस्थितियों में ही अनुमति दी जा सकती है, और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले में कानून के अनुसार निर्धारित किया है।*

(vii) ***इस प्रकार यह न्यायालय पाता है कि डीएनए पितृत्व परीक्षण की आवश्यकता केवल दुर्लभतम और असाधारण मामलों में ही हो सकती है, जबकि बच्चे के सर्वोत्तम हित के साथ-साथ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपर्णा अजिंक्य फिरोदिया (सुप्रा.) के मामले निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए।***

9. इस न्यायालय को बच्चे के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य और उस पर प्रतिकूल

प्रभाव डालने वाले पहलुओं को सर्वोपरि ध्यान में रखना होगा।

10. अब समय आ गया है कि समाज और कानून वैवाहिक विवादों की तुलना में बच्चे और बचपन के महत्व को समझें, क्योंकि शादी में हार और जीत का प्रभाव बौना हो जाता है, जब इसकी तुलना वैवाहिक झगड़ों की वेदी पर बच्चे को प्रताड़ित करने या उसकी गरिमा के संवैधानिक अधिकार का त्याग करने के संदर्भ में बचपन को खोने से की जाती है।

11. इस न्यायालय ने यह भी पाया कि डीएनए परीक्षण एक बच्चे के अधिकारों पर हमला कर रहा है, जो उसके संपत्ति के अधिकार, सम्मानजनक जीवन जीने के अधिकार, गोपनीयता के अधिकार और आत्मविश्वास और माता-पिता दोनों का प्यार और स्नेह द्वारा खुशी पाने के अधिकार को प्रभावित कर सकता है।

12. इस मामले को बच्चे के चश्मे से देखा जाना चाहिए, न कि आपस में झगड़ा करने वाले माता-पिता के चश्मे से। इस न्यायालय की दृढ़ राय है कि बच्चे को तलाक के मुकदमे में मोहरे के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, जहां माता-पिता में से कोई भी अपने पति या पत्नी से छुटकारा पाना चाहता है, जबकि बच्चे के गरिमामय माता-पिता के महत्वपूर्ण अधिकारों का त्याग करना चाहता है, जो न केवल बच्चे के अधिकारों पर अथाह दुख पैदा करता है, बल्कि उसके अस्तित्व/मानस पर स्थायी आघात भी पहुंचाता है

13. जब बच्चे के सम्मान और माता-पिता बनने के अधिकार की तुलना की जाती है तो प्रतिस्पर्धी पति-पत्नी के बीच तलाक की लड़ाई जीतने या हारने का दर्द बहुत मामूली होता है।

14. इसलिए, विवाह की पवित्रता और बचपन की पवित्रता के बीच चयन करते समय, न्यायालय के पास जीवन की पवित्रता, अर्थात बचपन की पवित्रता की ओर झुकाव के अलावा कोई विकल्प नहीं है। पक्ष विवाह को खो सकते हैं या नहीं खो सकते हैं, लेकिन न्याय की भावना बच्चे/बचपन को खोने का जोखिम नहीं उठा सकती है, क्योंकि कोई भी अदालत केवल वैवाहिक निवारण में न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपनी आँखें बंद नहीं कर सकती है, जबकि पितृत्व की लड़ाई को हार जाना जो बच्चे के बाल्यावसथा के लिए हानिकारक है।

15. इस प्रकार, उपरोक्त टिप्पणियों के प्रकाश में और वर्तमान मामले के तथ्यात्मक

मैट्रिक्स को देखते हुए, यह न्यायालय इसे वर्तमान याचिका में याचिकाकर्ता को कोई राहत देने के लिए उपयुक्त मामला नहीं पाता है।

16. परिणामस्वरूप, वर्तमान याचिका खारिज की जाती है। सभी लंबित आवेदनों का निपटारा कर दिया गया है।

(डॉ.पुष्पेन्द्र सिंह भाटी), न्यायमूर्ति

SKant/-

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।
अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।